विशेष/इन-डेप्थ/द बिग पिक्चर/देश-देशांतर: इसलिये नहीं चलेगा महाभियोग

संदर्भ एवं पृष्ठभूमि

सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा को पद से हटाने के लिये कांग्रेस सहित सात विपक्षी दलों ने महाभियोग प्रस्ताव लाने के लिये 64 सांसदों के हस्ताक्षरों से युक्त नोटिस उपराष्ट्रपति और राज्यसभा के सभापति वेंकैया नायडू को 20 अप्रैल को दिया था। लेकिन संविधान विशेषज्ञों से इस मसले पर सलाह-मशविरा करने के बाद 23 अप्रैल को यह महाभियोग नोटिस इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि मुख्य न्यायाधीश के खिलाफ लगाए गए आरोप न्यायपालिका की स्वतंत्रता को कमतर आँकने वाले हैं।

- यहाँ यह जान लेना ज़रूरी है कि देश के संविधान में उच्च न्यायपालिका के न्यायाधीशों के खिलाफ महाभियोग चलाकर उन्हें हटाने का कोई प्रावधान नहीं है। केवल राष्ट्रपति के खिलाफ महाभियोग का प्रावधान संविधान में किया गया है। भारत के संविधान में अनुच्छेद 56 के अनुसार महाभियोग की प्रक्रिया ही राष्ट्रपति को हटाने के लिये प्रयुक्त की जा सकती है। अनुच्छेद 61 के अनुसार राष्ट्रपति को हटाने के लिये महाभियोग चलाने का आधार सिर्फ एक ही हो सकता है, और वह है संविधान का अतिक्रमण। इसके लिये प्रस्तावक को लोकसभा और राज्यसभा में 14 दिन का नोटिस देना होता है, जिस पर कम-से-कम एक-चौथाई सदस्यों के हस्ताक्षर ज़रूरी होते हैं।

48 साल पहले भी हुआ था ऐसा

एक ऐसा ही वाकया लगभग पाँच दशक पहले सामने आया था जब सर्वोच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश को पहली बार ऐसे कदम का सामना करना पड़ा था। पूर्व सरकारी सेवक ओ.पी. गुप्ता की एक मुहिम के बाद मई, 1970 में तत्कालीन लोकसभा स्पीकर जी.एस. ढिल्लों को सर्वोच्च न्यायालय के तत्कालीन न्यायमूर्ति जे.सी. शाह के खिलाफ महाभियोग प्रस्ताव सौंपा गया था। ओ.पी. गुप्ता ने न्यायमूर्ति जे.सी. शाह पर उस समय बेईमानी का आरोप लगाया था जब उन्होंने एक सुनवाई के दौरान उनके खिलाफ कुछ टिप्पणियाँ की थीं। बहरहाल, स्पीकर ने नोटिस को 'महत्त्वहीन' बताकर खारिज कर दिया था।

खारिज करने के पक्ष में 22 कारण

संविधान विशेषज्ञों और जानकारों के साथ विस्तार से विचार-विमर्श करने के बाद देश के मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा पर महाभियोग चलाने के लिये 20 अप्रैल को राज्यसभा में सात विपक्षी दलों के 64 सांसदों के हस्ताक्षर वाले नोटिस को उपराष्ट्रपति और राज्यसभा के सभापति एम. वेंकैया नायडू ने खारिज कर दिया।

क्या कहा राज्यसभा सभापति ने?: प्रस्ताव में जिन तथ्यों के बारे में कहा गया है उससे इसका कोई वास्तविक कारण नहीं बनता है कि मुख्य न्यायाधीश को दुर्व्यवहार के लिये गलत ठहराया जाए। जिन सांसदों ने महाभियोग का नोटिस दिया वे स्वयं ही आरोपों के बारे में निश्चित नहीं थे।

- उपराष्ट्रपति ने अपने 10 पेज के आदेश में विपक्ष के तमाम आरोपों को निराधार बताते हुए प्रस्ताव को खारिज करने के 22 कारण बताए।
- इस नोटिस पर जजेस इन्क्वायरी एक्ट की धारा 3(1) के तहत विचार करने की ज़रूरत थी। इस एक्ट के तहत जजों पर लगे किसी प्रकार के आरोप की जाँच होती है।
- चूँकि यह प्रस्ताव मुख्य न्यायाधीश के खिलाफ था, इसलिये इस मामले में उनसे कोई कानूनी राय नहीं ली जा सकती थी।
- ऐसे में कानून के विशेषज्ञ, संविधान विशेषज्ञों और राज्यसभा तथा लोकसभा के पूर्व महासचिवों से चर्चा की गई।
- पूर्व लॉ अधिकारियों, विधि आयोग के सदस्यों और प्रख्यात न्यायविदों से भी इस मुद्दे पर चर्चा की गई।
- संविधान के प्रस्तावों और जजों को हटाने के मौजूदा प्रावधानों का भी अध्ययन किया गया तथा पूरी जाँच-परख के बाद यह निष्कर्ष निकला कि यह नोटिस सही नहीं है।
- महाभियोग प्रस्ताव राजनीति से प्रेरित है, तर्कों में मज़बूत आधार नहीं है। तकनीकी आधार पर भी प्रस्ताव में कोई मेरिट नहीं है।
- कदाचार साबित करने के लिये ठोस सबूत चाहिये, लेकिन मुख्य न्यायाधीश पर शक के आधार पर आरोप लगाए गए।
- सांसदों ने अपने प्रस्ताव में हो सकता है, ऐसा प्रतीत होता है का इस्तेमाल किया, जो काल्पनिक लगता है।
- कानून के कई जानकारों से इस प्रस्ताव पर विस्तृत चर्चा की गई। हर आरोप पर निजी तौर पर विचार किया गया और तब इस नतीजे पर पहुँचा गया कि इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया जा सकता।
- रोस्टर बँटवारा भी सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश का अधिकार है और वह **मास्टर ऑफ रोस्टर** होते हैं।
- हाल के कामिनी जायसवाल बनाम यूनियन ऑफ इंडिया के मामले में 14 नवंबर, 2017 को 5 जजों की पीठ ने टिप्पणी की थी कि मुख्य न्यायाधीश **फर्स्ट अमंग इक्वल** हैं।

- जहाँ तक रोस्टर का संबंध है तो इस बारे में मुख्य न्यायाधीश के पास बेंच का गठन करने और केसों का बँटवारा करने का अधिकार है। यह न्यायालय का अंदरूनी मामला है और वह इस पर खुद ही फैसला कर सकता है।

क्या है मास्टर ऑफ रोस्टर?

हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय के पाँच न्यायाधीशों के एक समूह ने मुख्य न्यायाधीश के व्यापक कर्त्तव्यों को संहिताबद्ध करने का प्रयास किया। ऐसा विशेष रूप से Master of Roster के रूप में मुख्य न्यायाधीश की मामलों को विभिन्न पीठों को आवंटित करने संबंधी क्षमता के संदर्भ में किया गया।

- मुख्य न्यायाधीश के कार्यों को **'संस्थागत'** बनाने का यह प्रयास 12 जनवरी की उस प्रेस कॉन्फ्रेंस के बाद किया गया, जिसमें चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों ने सर्वोच्च न्यायालय में मामलों के आवंटन के तरीके के बारे में सवाल उठाए थे।
- उन्होंने कहा कि मुख्य न्यायाधीश चयनात्मक रूप से संवेदनशील और राष्ट्रीय स्तर के महत्त्वपूर्ण मामलों को अपनी पसंदीदा बेंचों को आवंटित करते आए हैं।
- उन्होंने यह भी कहा कि बार-बार विनती करने के पश्चात् भी वर्तमान मुख्य न्यायाधीश समुचित कार्यवाही करने में असफल रहे हैं।
- मामले आवंटन के तरीके को संहिताबद्ध करने का प्रयास सर्वोच्च न्यायालय के भीतर स्थिति में सुधार लाने हेतु किया गया था।
- मध्यस्थ न्यायाधीशों के समूह में एस.ए. बोबडे, एन.वी. रमन, यू.यू. ललित, डी.वाई. चंद्रचूड़ और ए.के. सीकरी शामिल थे।
- न्यायाधीशों के इस समूह ने अपने कदम को "भारत के सर्वोच्च न्यायालय में न्याय प्रशासन के तहत विभिन्न क्षेत्रों में प्रथाओं और सम्मेलनों को संस्थागत एवं सशक्त बनाने" के प्रयास के उद्देश्य के रूप में देखा।
- पाँच सदस्यीय इस समूह ने मुख्य न्यायाधीश और चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों के साथ गहन बातचीत की और एक समिति के गठन का सुझाव दिया।
- न्यायाधीशों का यह पैनल सर्वोच्च न्यायालय के अभिसमयों और प्रथाओं को संस्थागत बनाने का प्रयास करेगा।
- सर्वोच्च न्यायालय के अभिसमयों में यह कहा गया है कि बड़े मामलों की सुनवाई भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा की जानी चाहिये और ऐसा संभव न हो तो मामला दूसरे न्यायालय में भेजा जाना चाहिये तथा इसी तरह अदालतों के अवरोही क्रम में मामलों का स्थानांतरण किया जाना चाहिये।
- बेंचों का गठन न्यायाधीशों की वरिष्ठता के आधार पर किया जाना चाहिये।
- समिति का गठन और सदस्यों के बारे में विचार-विमर्श भी किया गया। लेकिन इसी बीच बातचीत बंद हो गई और सारे प्रस्ताव अधर में लटक गए।

वर्तमान स्थिति क्या है?

- 11 अप्रैल, 2018 को तीन सदस्यीय पीठ द्वारा एक निर्णय दिया गया, जिसमें यह माना गया कि भारत के मुख्य न्यायाधीश के पास मामलों को आवंटित करने और न्याय-पीठों का गठन करने के लिये **'विशिष्ट विशेषाधिकार'** है।
- 11 अप्रैल के इस फैसले में नवंबर 2017 में पाँच न्यायाधीशों वाली संविधान पीठ के उस फैसले को दोहराया गया जिसमें मुख्य न्यायाधीश को मास्टर ऑफ रोस्टर के रूप में पूर्ण अधिकार प्रदान किया गया था।
- 13 अप्रैल, 2018 को जस्टिस ए.के. सीकरी के नेतृत्व वाली एक बेंच ने इस संबंध में पूर्व कानून मंत्री शांति भूषण द्वारा दायर की गई याचिका पर सुनवाई करते हुए कहा कि सर्वोच्च न्यायालय के मामलों की आवंटन संबंधी प्रक्रिया न्यायालय का आंतरिक मामला है, अतः स्वयं न्यायाधीशों को स्वशासन तंत्र का विकास करने देना चाहिये।

(टीम दृष्टि इनपुट)

- विपक्ष के 5 आरोपों की भलीभाँति जाँच करने के बाद उपराष्ट्रपति का मानना था कि ये आरोप स्वीकार नहीं किये जा सकते, क्योंकि इस तरह के आरोपों से न्यायपालिका की स्वतंत्रता को ठेस पहुँचती है, जो भारतीय संविधान की मूल भावना है। अतः इन कागज़ातों के आधार पर मुख्य न्यायाधीश दुर्व्यवहार के दोषी नहीं करार दिये जा सकते हैं।
- देश के सर्वोच्च न्यायालय के सर्वोच्च अधिकारी के खिलाफ इस तरह का फैसला लेने से पहले विपक्ष को इस पर बारीकी से सोचना चाहिये था, क्योंकि इस तरह के प्रस्ताव से आम लोगों का न्यायपालिका में विश्वास कम होता है।

इसलिये लेना पड़ा तुरंत फैसला: इस तरह के प्रस्ताव के लिये संसदीय परंपरा का पालन करना पड़ता है। राज्यसभा के सदस्यों की हैंडबुक के पैराग्राफ 2.2 में इसका उल्लेख है कि इस प्रकार के प्रस्ताव को तब तक सार्वजनिक नहीं किया जाना चाहिये, जब तक सभापति इसे स्वीकार नहीं कर लेते। लेकिन प्रस्ताव देने वालों ने प्रेस कांफ्रेंस बुलाकर इसे प्रचारित-प्रसारित कर दिया, जो कि संसदीय परंपरा के खिलाफ था। इस कारण तुरंत फैसला लेना पड़ा ताकि इस मामले में अटकलों पर रोक लग सके।

फैसले के विरोध में तर्क

मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा के खिलाफ महाभियोग प्रस्ताव के नोटिस को खारिज किये जाने के फैसले को प्रस्तावक दलों ने असंवैधानिक और गैरकानूनी बताते हुए कहा कि वह इस फैसले के खिलाफ सर्वोच्च न्यायालय में अपील करने पर विचार करेंगे।

- सरकार नहीं चाहती कि कदाचार के जो आरोप सामने आए हैं, उनकी जाँच हो।
- सर्वोच्च न्यायालय में मामला जाने पर मुख्य न्यायाधीश का इससे कोई लेना-देना नहीं रहेगा और इसके संवैधानिक पहलुओं पर गौर किया जाएगा।
- सभापति ने कोई जाँच कराए बिना ही इस नोटिस को खारिज कर दिया। यह असंवैधानिक, गैरकानूनी, गलत सलाह पर आधारित और जल्दबाजी में लिया गया फैसला है।
- सभापति ने आरोपों की जाँच होने से पहले उनके गुण-दोषों पर फैसला कैसे कर लिया? जाँच समिति फैसला करती कि आरोप साबित होते हैं या नहीं।
- सरकार नहीं चाहती कि इसकी जाँच हो और उसका रुख न्यायपालिका को नुकसान पहुँचाने वाला है।

- 64 सांसदों ने सोच-विचार करके महाभियोग प्रस्ताव का नोटिस दिया था और इसमें प्रधान न्यायाधीश के खिलाफ जिन आरोपों का उल्लेख किया गया था वे बहुत गंभीर हैं।
- ऐसे में राज्यसभा के सभापति को जाँच समिति गठित करनी चाहिये थी और जाँच पूरी होने के बाद कोई फैसला करते।
- राज्यसभा के सभापति प्रस्ताव पर निर्णय नहीं ले सकते, उन्हें प्रस्ताव के गुण-दोष पर फैसला करने का अधिकार नहीं है।

यह महाभियोग प्रस्ताव का नोटिस किसी पार्टी की तरफ से नहीं, राज्यसभा के 64 सदस्यों की ओर से दिया गया था। इन सदस्यों की ओर से ही शीर्ष अदालत में अपील दायर की जाएगी।

सुनिश्चित हो मुख्य न्यायाधीशों का कार्यकाल

- वर्ष 1997 से अब तक बने 17 मुख्य न्यायाधीशों में से केवल तीन का ही कार्यकाल दो साल से अधिक रहा है।
- जस्टिस दीपक मिश्रा ने 28 अगस्त, 2017 को भारत को 45वें मुख्य न्यायाधीश के रूप में शपथ ली थी और उनका कार्यकाल 2 अक्तूबर, 2018 को समाप्त हो जाएगा।
- पूर्व में तीन मुख्य न्यायाधीशों--जस्टिस के.एन. सिंह (1991), जस्टिस जे.सी. शाह (1970) तथा जस्टिस गोपाल वल्लभ पटनायक (2002) का कार्यकाल तो क्रमश: 17, 35 और 41 दिनों का ही रहा।
- देश में आज़ादी के बाद से अब तक कुल 14 राष्ट्रपति चुने गए हैं, जबकि इतने ही समय में सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीशों की कुल संख्या 43 रही है।
- इसके मद्देनज़र समय-समय पर मुख्य न्यायाधीश के पद के लिये एक निश्चित कार्यकाल तय करने की बात होती रही है, लेकिन इस विचार को अमल में नहीं लाया जा सका है।
- कार्यकाल की अधिकतम अवधि, उच्च दक्षता और बेहतर प्रदर्शन को सुनिश्चित करने के लिये महत्त्वपूर्ण है।
- भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीशों की यह शिकायत रही है कि उन्हें न्यायपालिका के लिये सुधारात्मक गतिविधियों को अंजाम तक पहुँचाने का पर्याप्त समय नहीं मिला।

विधि आयोग का सुझाव

विधि आयोग भी यह सुझाव दे चुका है कि मुख्य न्यायाधीशों का कार्यकाल दो साल तय कर दिया जाए। विधि आयोग के मुताबिक इस सुझाव को 2022 से अमल में लाया जा सकता है, क्योंकि मौजूदा दौर के सबसे कनिष्ठ न्यायाधीश भी उस समय तक मुख्य न्यायाधीश बनकर सेवानिवृत्त हो जाएंगे। इससे मौजूदा न्यायाधीशों का वरिष्ठता क्रम भी प्रभावित नहीं होगा। सरकार की नीति रही है कि वह गृह सचिव, विदेश सचिव तथा सीबीआई निदेशक के लिये दो साल का कार्यकाल निर्धारित करती है, तो फिर देश के मुख्य न्यायाधीश के लिये क्यों नहीं? यही कारण है कि विधि आयोग ने मुख्य न्यायाधीश के कार्यकाल को निश्चित करने का सुझाव दिया था।

परंपरा से बंधा है मुख्य न्यायाधीश का पद

स्थापित परंपरा के मुताबिक सर्वोच्च न्यायालय के वरिष्ठतम न्यायाधीश को मुख्य न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया जाता है और इस दौरान यह नहीं देखा जाता कि उस न्यायाधीश की सेवानिवृत्ति में कितना समय बाकी है। इस परंपरा का उल्लंघन नहीं किया जाता। पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने मुख्य न्यायाधीश के पद पर नियुक्ति के मामले में दो बार वरिष्ठता के पैमाने का उल्लंघन किया था, जबकि उनका उद्देश्य मुख्य न्यायाधीश के लिये लंबा कार्यकाल तय करना नहीं था।

(टीम दृष्टि इनपुट)

निष्कर्ष: राज्यसभा में सात विपक्षी दलों ने देश के मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा के खिलाफ महाभियोग की प्रक्रिया शुरू की थी। संवैधानिक संदर्भ में इस घटना के महत्त्व को बढ़ा-चढ़ाकर नहीं प्रस्तुत करना चाहिये। इससे देश की विधायिका और न्यायपालिका के बीच का नाज़ुक रिश्ता प्रभावित हो सकता है, साथ ही न्यायिक स्वायत्तता और न्यायिक शुचिता के सार्वजनिक आकलन का प्रश्न और जटिल हो सकता है। जाहिर है ऐसा कदम आखिरी उपाय के तौर पर उठाया जाना चाहिये था और इससे कोई राजनीतिक लाभ नहीं जुड़ा होना चाहिये। विपक्षी नेताओं ने इस संबंध में जो वक्तव्य दिये और दे रहे हैं उससे यही प्रतीत होता है कि विपक्ष महाभियोग प्रस्ताव के ज़रिये यह स्थापित करना चाहता है कि न्यायपालिका और कार्यपालिका बेहद करीब हैं। महाभियोग प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए कहा गया कि लगाए गए आरोपों का गंभीरता और सावधानीपूर्वक विश्लेषण के आधार पर यह कहना गलत नहीं होगा कि व्यवस्था के किसी भी स्तंभ को विचार, शब्द या कार्यकलापों के द्वारा कमज़ोर करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। मुख्य न्यायाधीश केवल सर्वोच्च न्यायालय का ही नेतृत्व नहीं करते, बल्कि वह देश की संपूर्ण न्यायिक व्यवस्था के प्रमुख भी हैं।

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/impeachement-of-cji